अध्याय 4

4.1 (अ) आधुनिक युग और लोकसाहित्य

- आधुनिक युग और लोकसाहित्य के विषय में विद्वानों के मत
- लोकसाहित्य का अस्तित्व
- भविष्य में लोकसाहित्य

4.2 (ब) लोकसाहित्य का संकलन एवं संरक्षण

- प्रकाशित एवं अप्रकाशित लोकसाहित्य
- पुनरावृत्ति एवं नवीन भाषिक बदलाव
- निष्कर्ष
- **साक्षात्कार**

अध्याय 4

▪ आधुनिक युग और लोकसाहित्य :-

- o आधुनिक युग और लोकसाहित्य के विषय में विद्वानों के मत
- o लोकसाहित्य का अस्तित्व

आधुनिक युग का सुत्रपात तकरीबन 19 वीं शताब्दी से हुआ। आधुनिक युग में हिंदी साहित्य, भारतीय समाज एवं संस्कृति के परिवेश में विकास और तकनीक की दृष्टि से महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। आधुनिक युग में भारत में तेजी से भूमण्डलीकरण के कारण 'वासुदेव कुटुम्बकम' की भावना से ओतप्रोत जगत नई तकनीक की ओर प्रेरित हुआ। जिसका सामान्य रूप से हिंदी साहित्य पर भी हुआ। जिसके अंतर्गत भाषा का विकास, साहित्यिक एवं तकनीकी प्रगति का संचार हुआ। तात्कालीन सामजिक समस्याओं का प्रतिबिम्ब साहित्य में दिखा। हिंदी साहित्य में नए आयाम के साथ साहित्यकारों ने कथा, काव्य, नाटक, निबंध, आदि की उत्कृष्ट रचना की है। आधुनिक युग के सम्यक परिवर्तन को परिमार्जित कर डॉ. रामचन्द्र तिवारी ने लिखा है कि- "आज वैज्ञानिक प्रगति के साथ जीवन में बढ़ती हुई यांत्रिकता ने मानव-मानव के बीच सर्वथा नये सम्बन्धों की सृष्टि की है। आज का मनुष्य व्यवस्था का पुर्जा बन गया है। मानव की रागात्मक चेतना का प्रसार अवरुद्ध हो गया है। मानवीय संवेदना में निरंतर ह्रास होता जा रहा है। मनुष्य बुद्धि एवं तर्क के सहारे समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने को विवश है। अब किसी सार्वभौम एवं शाश्वत सत्ता का स्वीकार अनावश्यक प्रतीत होने लगा है। आज का व्यक्ति व्यग्र, दु:खी, निराश, ऊब, और अकेलेपन के अहसास से पीड़ित एवं संत्रस्त है। वह अपने को अजनबी और निर्वासित

अनुभव कर रहा है। इस अनुभव को विदेशी प्रभाव कहकर टाला नहीं जा सकता। विज्ञान की चकित कर देने वाली ध्वंसकारी शक्ति के सामने अपनी विवशता का बोध किसी देश या महाद्वीप तक ही सीमित नहीं है। इसीलिए आधुनिकता आज के प्रत्येक साहित्य विधा को परखने की कसौटी बन गई है।"[1] आधुनिक युग में समयानुसार कालजयी परिवर्तन आये हैं। आज का मानव इलेक्ट्रोनिक संसाधनों का आदि हो गया है। मूल चेतना से परे भावात्मक धरातल पर अपने आप को कृत्रिमता से सुसज्जित पाता है। "मानव आदि काल से अपनी रागात्ममक भावनाओं की भाषागत अभिव्यक्ति गीतों, कहानियों, उक्तियों, आदि के द्वारा करता आया है। भारत में ब्रिटिश शासन के औपनिवेशक, शोषक तथा आतंकवादी स्वरूप प्रभाव लोकपर भी पड़ा। जहाँ उसने अपनी रागात्मक चेतना को गीतों के माध्यम से वाणी दी वहीं उसने ह्रदय से क्रांतिकारी चेतना भी प्रचंड रुप से प्रवाहित हुई। पूँजीवाद समाज में जूझना भी लोक के लिए बहुत बड़ी चुनौती थी। इसी संदर्भ में गौरतलब है कि भारत पिछली शताब्दी के अंतिम दशक में उदारीकरण की नीति के तहत व्यापक होती हुई बाजारीकरण की प्रक्रिया ने अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ संस्कृति को भी अपने प्रभाव क्षेत्र में समेट कर बड़ी तेजी से लोकप्रिय संस्कृति में परिवर्तित करना शुरु कर दिया है।"[2]

लोकसाहित्य का जीवन में महत्व को दर्शाते हुए डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती का कथन है कि- लोकसाहित्य का किसी देश- विशेष के जनजीवन के लिए सांस्कृतिक महत्व है। किसी देश का समाज, धर्म, साहित्य, दर्शन, लोकसाहित्य में यथार्थ रूप में सुरक्षित है। इसके अध्ययन से हमें देश-विशेष के राष्ट्रीय जीवन का पूरा चित्र मिलता है। इसके साथ ही साथ स्थानीय इतिहास, भूगोल तथा भाषा-सम्बन्धी ज्ञान भी हमें उपलब्ध होता है। अत: लोकसाहित्य का महत्व अभिजात-साहित्य से कहीं अधिक है। यही कारण है कि पश्चिमी देशों में इसके वैज्ञानिक अध्ययन के लिए अनेक 'सोसायटियों' की स्थापना की गई है। भारत में भी अब इसके अध्ययन के लिए अनेक 'संस्थानों' की स्थापना हो चुकी है।"[3]

लोकसाहित्य यह लोकमानव का वह मौखिक साहित्य है जो मानव की आर्विभूत होने के साथ ही निष्पन्न हुआ होगा । डॉ. सत्येंद्र ने "लोकसाहित्य को आदिम मानव की आदिम प्रवृत्तियों का कोष कहा है ।"[4] लोकसाहित्य के धरातल एवं शिष्ट साहित्य के अंतर्भाव को स्पष्ट करते हुए डॉ. सत्येंद्र ने कहा है कि- लोक साहित्य का धरातल कई प्रकार का हो जाता है । उन प्रकारों में लौकिक साधारण साहित्य के दो वर्ग हो जाते हैं । चेतन मस्तिष्क के धरातल वाले को 'ग्राम नागरिक साहित्य का नाम दे सकते हैं । इस ग्राम नागरिक साहित्य में भी आपको दो रूप मिलते हैं । एक को सहज और दूसरे को विशिष्ट कह सकते हैं । इनमें ग्रामीण मस्तिष्क भी अपने ज्ञान के वैभव को प्रदर्शित करने के लिए उत्सुक रहता है ।"[5] लोकसाहित्य को डॉ. सत्येंद्र ने लोकसाहित्य को इस प्रकार परिभाषित किया है कि- " लोकसाहित्य के अंतर्गत वह समस्त बोली या भाषागत अभिव्यक्ति आती है जिसमें

(अ) आदिम मानस के अवशेष उपलब्ध हों,

(आ) परम्परागत मौखिक क्रम से उपलब्ध बोली या भाषागत अभिव्यक्ति हो जिसे किसी की कृति न कहा जा सके, जिसे श्रुति ही माना जाता हो, और जो लोकमानस की प्रवृत्ति में समायी हुई हो;

(इ) कृतित्व हो किंतु वह लोकमानस के सामान्य तत्वों से युक्त हो कि उसके किसी व्यक्तित्व से साथ सम्बद्ध रहते हुए भी, लोक उसे अपने ही व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करे ।"[6]

लोक साहित्य के अस्तित्व के एवं ग्रामीण समाज की उपादेयता के विषय में लिखा है कि - "सभ्यता के प्रभाव से दूर रहने वाली अपनी सहजावस्था में वर्तमान जो निरक्षर जनता है उसकी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, जीवन- मरण, लाभ-हानि, सुख-दुःख, आदि की अभिव्यंजना जिस साहित्य में होती है उसी को लोकसाहित्य कहते हैं । इस प्रकार लोकसाहित्य जनता का वह साहित्य है जो जनता द्वारा,

जनता के लिए लिखा गया हो।"[7] लोकसाहित्यिक विधाओं को लोकवेत्ताओं ने लोकगीत, लोक कथा, लोकगाथा, लोक नाट्य, लोक सुभाषित (प्रकीर्ण साहित्य) आदि भागों में विभाजित किया है। इन सभी ने लोकगीत को लोकसाहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा के रूप में स्वीकार्य किया है। लोकगीतों की बहुलता का प्रमाण इतना है के भारत में बोली जानेवाली भाषा एवं बोलियों में प्रचुर मात्रा में इसकी उपलब्ध्ता है। भारत में नवीनतम विश्लेषण के अनुसार मौजुदा आंकड़ों में 19,500 बोलियाँ है जिसे मातृभाषा की संज्ञा में समाहित कर सकते हैं। प्रत्येक बोली का अपना लोकसाहित्य है। लोकगीत अन्य विधाओं के मुकाबले अधिक प्राप्त होते हैं। "लोकगीत के रचयिता शास्त्रीयता विषयों के ज्ञाता नहीं होता वे प्राय: अशिक्षित होते है अत: पिंगल शास्त्र का ज्ञान उन्हें नहीं के बराबर होता है यही कारण है कि लोकगीतों में छंद सम्बन्धी अनेक दोष होने के कारण लयबद्धता नहीं पाई जाती। परंतु उनकी शब्द योजना एवं स्वरयोजना स्वाभाविक तथा अनुभूतिगम्य होती है। इसी से लोकगीतों में मधुरता, प्रसादगुणयुक्तता एवं सरसता प्रधान रूप से मिलती है।"[8] लोकगीतों के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है- "लोकगीतों का मूल उद्देश्य लोकजीवन में उल्लास के जीवन रस को अनुभूत करना है। इससे जीवन की तिक्तता एवं कटुता से मुक्ति मिलती है इस प्रकार लोक्गीत जनजीवन और जनमानस दोनों की ही एक उद्देश्यपूर्ण अभिव्यक्ति करते हैं। इन लोकगीतों के माध्यम से लौकिक जीवन की परंपराएँ आज भी जीवित है। इन परंपराओं का महत्व आज भले ही स्वीकृत हो किंतु यह स्वयं में सत्य है कि ज्यों-ज्यों हम लोक को सहज प्रवृत्तियों से दूर हटकर यांत्रिक सभ्यता की ओर अग्रसर होते जाते हैं, जीवन रस से वंचित भी होते जाते हैं।"[9] डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय के अनुसार "लोकगीतों में बुद्धिकौशल और साज-सज्जा का काम नहीं होता। लोकगीत वास्तव में आत्म तत्त्व से अनुप्राणित होने से संस्कृति के प्रतीक हैं।"[10] लोकगीतों को संगीतमय रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय हमारी ग्रामीण महिलाओं को है, गृहस्थ जीवन की व्यस्तता में भी महिलाएं सिल पर मसाले पीसते समय, रसोई घर में काम करते समय, चक्की चलाते समय, खेतों में काम करते समय, कुँए से पानी भरते समय, गाय भैंस को चारा व दूध निकालते समय, कोई न कोई गीत गुनगुनाती रहती

होंगी साथी अन्य महिलाओं के सहयोग से गीत की पंक्तियों का निर्माण हुआ होगा। इस तरह गीतों के निर्माण में और लोकसाहित्य के अस्तित्व को कायम रखने में स्त्रीयों का महत्वपूर्ण योगदान है।

लोक साहित्य के अस्तित्व के विषय में विद्वानों ने अंवेषण एवं अथक परिश्रम के बाद लोकसाहित्य को लिपिबद्ध किया है। जिनमें डॉ. सत्येंद्र, आचार्य रामनरेश त्रिपाठी, डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती, डॉ. श्याम परमार, डॉ. कृष्ण देव उपादध्याय, डॉ. कुलदीप, डॉ. मोहनलाल मधुकर, डॉ. बापूराव देसाई आदि का योगदान सराहनीय है।

लोकसाहित्य के भविष्य को लेकर विद्वान चिंतित नज़र आये हैं। डॉ. विजयपाल सिंह ने लोकसाहित्य को भविष्य में परिरक्षित रखने हेतु सुझाव देते हुए कहा है कि- “लोक की भावनाओं को व्यक्त करने वाली व्यक्तित्व हीन अभिव्यक्ति को लोकसाहित्य कहा जा सकता है। लोकसाहित्य प्रधानत: मौखिक एवं परम्परागत होता है। इसकी परम्परा अत्यंत प्राचीन है, उतनी प्राचीन जितनी शायद मानव जाति। परन्तु खेद है कि इस साहित्य की ओर जितना ध्यान विद्वानों को देना चाहिए उतना नहीं दिया गया। इधर कुछ विद्वानों के प्रयास तथा प्रेरणा से लोकसाहित्य सम्बन्धी कार्य किया जा रहा है और करवाया भी जा रहा है। अनेक विश्वविद्यालयों ने हिन्दी के एम.ए. के पाठ्यक्रम में एक वैकल्पिक प्रश्न- पत्र के रूप में लोकसाहित्य के अध्ययन को स्थान दिया है। अत: इस विषय के विद्यार्थियों के लिए एक पाठ्य ग्रंथ की महती आवश्यकता अनुभव की जा रही है।”[11] आधुनिक युग में अन्य विषय की तुलना में इतना प्रभावशाली नहीं है। लोकमानव की अभिव्यक्ति का परिमार्जन साहित्यकारों एवं शोध प्रेमि अध्येताओं ने किया है। लोकसाहित्यिक विधाओं का संकलन एवं संशोधन कर इस अमूल्य विरासत को संझोया जा सकता है। युगीन परिस्थितियों के बदलाव के कारण लोकसाहित्य में नवीन चेतना का सूत्रपात हुआ।

लोकसाहित्य भविष्य में जीवंत रहे उसके लिए नए लेखकों और कवियों को लोकसंस्कृति को अहमितय देते हुए संरक्षण का कार्य करना चाहिए । तात्कालीन समाज में लोकसाहित्य विभिन्न प्रेरणाओं, समसामयिक मुद्दों और समाजिक परिवर्तन का परिचय देता है । कालजयी लोककथा, लोकगाथा, लोकगीत एवं लोकनाट्य मात्र धार्मिक दृष्टि से समाज में उपस्थित है । पुरात्व संस्कृति एवं इतिहास घटित गतिविधियों में लोकसाहित्य की उपस्थिति को अनदेखा नहीं किया जा सकता है । अपनी सांस्कृतिक विरासत एवं संस्कृति को भविष्य में सश्क्त बनाने हेतु लोक साहित्य अध्येताओं को अथक परिश्रम करना होगा । भविष्य में लोकसाहित्य भाषा और क्षेत्रीय बोलियों के साहित्य का उदघाटन कर लोकसाहित्य के क्षेत्र में नए और युवा लेखक,कवि का उदय अलग-अलग क्षेत्रों की सांस्कृतिक धरोहर के प्रसार होगा । आलोचनात्मक दृष्टिकोण से लोकसाहित्य सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन के साथ बदलता रहा है जिसका प्रभाव समान्य रुप से देखा जा सकता है । विभिन्न समसामयिक मुद्दों को, तात्कालीन परिस्थितियों को नये शोध अध्येता परिवर्तित साहित्य के अंतर्गत रखकर प्रकाशित कर सकते हैं । लोकसाहित्य का भविष्य बहुत ही उद्घाटनात्मक है साहित्यिक समृद्धि, सामाजिक परिवर्तन, और सांस्कृतिक समृद्धि के साथ लोक साहित्य को जोड़ा जा सकता है ।

वैज्ञानिक तकनीकों का आगमन लोकसाहित्य को विशेष रूप से इंटरनेट विश्वपटल पर व्याप्त है । इस डिजिटाइजेशन के माध्यम से अपना विस्तार कर सकता है और नए प्रारूपों में विकसित हो सकता है । इसलिए लोकसाहित्य का भविष्य साहित्यिक सृजनात्मकता और सामाजिक परिवर्तन के साथ जुड़ा है । जिसका संरक्षण एवं संकलन करना अतिआवश्यक है । इंटरनेट की सहायता से आज हम वेबसाइट्स, ब्लॉग्स, सोशल मीडिया, और पॉडकास्ट्स के माध्यम से लोकसाहित्य की उपयोगिता को सिद्ध कर अपने सांस्कृतिक मूल्यों का संचार भविष्य में जीवंत रख सकते हैं ।

- **लोकसाहित्य का संकलन एवं संरक्षण**

o प्रकाशित एवं अप्रकाशित लोकसाहित्य

o पुनरावृत्ति एवं नवीन भाषिक बदलाव

"लोकसाहित्य की आधार शिला धर्म की धरती पर ही टिकी हुई है। धर्म लोकजीवन का प्राण है , बल है। और भारतीयों का जीवन तो धर्ममय है। अत: भारतीय लोकसाहित्य की पृष्ठभूमि धर्म ही है। यही कारण है कि हमारे लोकसाहित्य में धार्मिक भावनाओं का प्रकाशन किसी न किसी रूप में हुआ है । लोकगीत, लोकगाथा, लोककाथा, लोकनाट्य, लोककला, लोकसंगीत, लोकनृत्य, तथा कहावतें, मुहावरे, पहेलियाँ, सूक्तियाँ आदि में धर्म- सम्बंधी विचारों तथा भावनाओं का प्रकाशन हुआ है ।"[12] पारंपरिक और सांस्कृतिक धरोहर को धार्मिक विश्वास के माध्यम से प्रगाढ़ किया है । "लोकसाहित्य के सभी अंगों में धर्म उसी प्रकार से वर्तमान है जिस प्रकार से माला की प्रत्येक मनिका में सूत्र। धर्म की अनुस्यूतता के कारण ही जनता का साहित्य इतना लोकप्रिय हो सका है। इसी हेतु इसको इतना स्थायित्व प्राप्त हो सका है।"[13]

लोकसाहित्य का संकलन एवं संरक्षण की प्रेरणा पाश्चात्य अध्येताओं से भारत में आयी । भारत में लोकसाहित्य के अध्ययन की ओर अंग्रेजों के शासन काल से आरंभ हुआ लगभग 18वीं शताब्दी में "सर विलियम जोन्स ने 'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल नामक शोध संस्थान की स्थापना कलकत्ते में की 19वीं शताब्दी में अंग्रेजी शासकों ने जिनमें कुछ योग्य विद्वान भी थे भारतीय संस्कृति के प्रति अपनी जिज्ञासा प्रकट की और इस क्षेत्र में कार्य करना प्रारम्भ किया। बस, यहीं से भारतीय लोकसाहित्य के अध्ययन की नींव पड़ी ।"[14] "कर्नल टाड ने राजस्थान की सामाजिक अवस्था, रहन-सहन, आचार-विचार, वेश-भूषा, आदि का अध्ययन कर 'एनल्स एन्ड एंटीक्विटीज

ऑफ राजस्थान नामक प्रसिद्ध ग्रंथ सन् 1829 ई. में प्रकाशित किया ।"[15] दक्षिण भारतीय लोक साहित्य में 1868 ई. में अंग्रेजी साहित्यकार महिला फ्रगर ने दक्षिण भारतीय लोककथाओं को 'ओल्ड डकन डेज' नामक पुस्तक में संग्रहित किया था । इसके अलावा "दक्षिण लोकगीतों पर चार्ल्स ई. गोवर ने सन् 1871 में एक पुस्तक 'फोकसॉन्गस ऑफ सर्दन इंडिया' नामक सम्पादित की । भारतीय लोकगीतों का यह सर्वप्रथम संग्रह है जिसमें कन्नड़, कुर्ग, तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कूरल के लोकगीतों का सुंदर अंग्रेजी अनुवाद किया गया था ।"[16] भाषागत जागरुकता के बाद भारतीय लोकसाहित्यकारों संशोधन के कार्य किए जिसके अंतर्गत भारत के विविध प्रांतों में शोध संस्थान स्थापित हुए और लोकगीत एवं लोककथा., लोकगाथा आदि प्रकाश में आए । "डॉ. दिनेश चंद्र सेन ने बंगला लोकसाहित्य पर अपने भाषणों को 'फोकलिटरेचर ऑफ बंगाल नाम से प्रकाशित करवाया ।"[17] "गुजराती लोकसाहित्य के एकांत सावक श्री झवेरचंद मेघाणी का नाम सदा अमर रहेगा । उन्होंने गुजराती लोकसाहित्य पर इतना कार्य किया है कि उन्हीं के कार्यों पर अलग से एक शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया जा सकता है । उनकी संकलन-पद्धति, विवेचन- पद्धति, समालोचनात्मक दृष्टी आनेवाले अध्येताओं के लिए एक उज्जवल उदाहरण होंगे ।"[18] इसके साथ ही बिहार की बोलियाँ, मराठी लोकसाहित्य को संकलित कर प्रकाशित किया गया है । 20वीं शताब्दी में पंडित रामनरेश त्रिपाठी जी ने सन् 1929 में कविता कौमुदी के 5वें संस्करण में कई प्रांतों में घुम-घुमकर ग्रामगीतों का प्रकाशन किया जो भारतीय लोकसाहित्य की अमूल्य विरासत है । राजस्थानी लोक वार्ताओं का संकलन का कार्यभार डॉ. वासुदेव अग्रवाल और बनारसीदास चतुर्वेदी ने संभाला । डॉ. वासुदेव अग्रवाल ने मथुरा में सन् 1940 में ब्रज साहित्य मंडल की स्थापना की जहाँ से 'ब्रजभारती' नामक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ हुआ । डॉ. वासुदेव अग्रवाल की पुस्तक 'पृथिवी पुत्र' डॉ. सत्येंद्र ने 'ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन' ग्रथों के प्रकाशन के अप्रकाशित साहित्य को सफल रूप से प्रकाशित किया गया । "स्व. राहुल जी ने सन् 1937 ई. में लोकसाहित्य संकलन की एक योजना तैयार की जिसके आधार पर अनेक जनपदीय संस्थाओं का निर्माण हुआ । गढ़वाल में

गढ़वाली साहित्य परिषद, बघेलखंड में ‘रघुराम साहित्य परिषद’, भोजपुर में ‘भोजपुरी लोकसाहित्य परिषद’, राजस्थान में ‘भारतीय लोककला मंडल’ , तथा मालवा का ‘मालव लोकसाहित्य परिषद’ आदि कुछ संस्थाओं की स्थापना हुई।”[19]

सन् 1958 ई. में ‘भारतीय लोकसंस्कृति शोध संस्थान’ की स्थापना हुई । जहाँ से ‘लोकसंस्कृति’ नामक त्रैमासिक पत्रिका प्रकाशित हुई। जिसमें संस्थापक के रुप में पं. ब्रजमोहन व्यास, श्री कृष्णदास, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय कार्यरत रहे। इसके साथ ही लोकसाहित्य अध्येताओं ने भारत के विविध बोलियों एवं भाषा का अप्रकाशित लोकसाहित्य प्रकाशित कर उस क्षेत्र के लोकसाहित्य का अस्तित्व कायम किया। डॉ. बाबूराम सक्सेना ने ‘अवधी भाषा का विकास’ पुस्तक में अवधी के लोकगीतों का संकलन कर प्रकाशित किया इस क्रम में ‘मालवी लोकगीत’ के रचयिता डॉ. श्याम परमार, श्री श्यामाचरण दूबे ‘छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का परिचय, कौरवी और खड़ीबोली पर राहुल सांकृत्यायन ने ‘आदि हिंदी के गीत तथा कहानियाँ’,‘भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन’, ‘लोक साहित्य की भूमिका’ नामक पुस्तक डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने प्रकाशित की है।

लोकसाहित्य के अप्रकाशित साहित्य के संरक्षण कर प्रकाशित करने में सभी साहित्यकारों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जिसके किए हम और हमारी संस्कृति ऋणी इनकी रहेगी। लोकसाहित्य के संकलन और संरक्षण के विषय में डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती का कथन है कि- “लोकसाहित्य संस्थानों को इस ओर ध्यान देना चाहिए विशेष गाँवों में छोटे-छोटे केंद्र स्थापित कर संकलन की व्यवस्था करनी चाहिए।”[20]

सरकार को नये संशोधन केंद्र स्थापित कर लोक साहित्य के संकलन का कार्य करना चाहिए। आधुनिक युग में नवीनतम तकनीक एवं सुविधाएं हैं जिससे आसानी से लोकसाहित्य संरक्षण और प्रसारण किया जा सकता है। जिसमें डिजिटल संकलन के अंतर्गत स्मार्टफोन, स्मार्ट कैमरा, इंटरनेट की सहायता से ऑनलाइन डेटाबेस बनाकर उचित वेबसाइट एवं एप आदि का उपयोग कर लोकसाहित्य का संकलन कर उसे डिजिटल फॉर्मेट संरक्षित कर सकते हैं। जिसके तहत आज के युवा एवं समाज को समर्थन देने की आवश्यकता है। सांस्कृतिक संस्थानों का समर्थन, साहित्योत्सव और प्रदर्शनी में लोकसाहित्य का उत्सव कार्य क्रम कर शैक्षणिक संस्थानों का समर्थन आदि। यदि शैक्षणिक संस्थानों में कार्यक्रमों के माध्यम से लोगों को लोकसाहित्य के महत्व और संरक्षण के बारे में शिक्षा दी जाए तो आनेवाले समय में नवीनतम संशोधन होंगे जिससे अप्रकाशित साहित्य प्राप्त हो सकता है और डिजिटाइज़ेशन की सहायता से लोकगीतों, कहानियों और कला के प्रतिरूपों का संग्रहण कर उसे सुरक्षित रख सकते हैं।

लोकसाहित्य के प्रतिष्ठित कलाकारों को प्रात्साहित किया जा सकता है। ये कलाकार अपनी कला का निर्वहन अगली पीड़ी को तभी देंगे या सिखायेंगे। लोकसाहित्य का संकलन और संरक्षण आधुनिक युग में भी विशेष महत्व रखता है क्योंकि यह हमारी सांस्कृतिक धरोहर है और जिसको सुरक्षित रखना हमारा दायित्व है।

लोकसाहित्य में पुनरावृत्ति का सिलसिला आम हो गया है। विश्वविद्यालायों में पी-एच. डी. उपाधि हेतु लोकसाहित्य विषय पर शोध कार्य किए जा रहे हैं। मुख्यत: शोधार्थी उपलब्ध सामग्री को संदर्भ के रूप में उपयोग कर अध्यापन सम्पूर्ण करते है जिसमें अधिकांशत: पुनरावृत्ति देखी जा सकती है। लोकसाहित्य में मूल भाषा और शैली का ध्यान रखते हुए नए गीतों एवं कथाओं का संकलन कर प्रकाशित करना चाहिए जिससे हम सांस्कृतिक को विरासत सजीव रख सकेंगे।

लोकसाहित्य में पुनरावृत्ति से बचने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान देना आवश्यक है

- नवीन और अद्वितीय सामग्री से लोकसाहित्य में संशोधित साम्रगी आकर्षक और नवीन लगेगी, जिससे पुनरावृत्ति को रोका जा सकता है।
- नवीन रचनात्मक अद्यतन से संशोधन में कार्य करने से समय-समय पर अद्यतन कर नए विचार और सामाजिक परिवर्तन के कारण लोकसाहित्यिक बदलाव में सहायता प्राप्त होगी । जिससे समाज को नई प्रेरणा और दिशाएँ प्रदान की जा सकती हैं, और हम आप पुरानी सभ्यता से जुड़े रहेंगे
- सामाजिक (सोशल) मीडिया का उपयोग जिस तरह से आधुनिक युग में बढ़ रहा है उससे लोकसाहित्य के गीतों और कथाओं, नाट्य को सामाजिक मीडिया के सही तरीके से उपयोग कर इंटरनेट के आंतरिक जाल की सहायता से घर-घर पहुँचा कर लोकसाहित्य को पुनरावृत्ति से बचाया जा सकता है । जिसमें कॉपीराइट का अधिकार प्रत्येक सामग्री निर्माता (content creator) मदद करेगा ।

लोक साहित्य में सांस्कृतिक बदलाव समय के साथ आए हैं जिसका प्रभाव सांस्कृतिक परिवेश पर सामान्य रूप से होता है । नई पीढ़ियाँ अपनी पारंपरिक साहित्यिक धरोहर को उपेक्षा करती हैं, तो लोकसाहित्य का अस्तित्व लुप्त हो सकता है। लोक साहित्य भाषा में परिवर्तन हुए हैं समयानुसार क्षेत्रिय बोली एवं भाषा में परिवर्तन होते हैं जिसका प्रभाव लोकसाहित्य की भाषा पर समान रूप से होता है । ग्रामीण व्यक्ति रोजगार की तलाश में एक राज्य से दुसरे राज्य पलायन करते हैं जिससे न केवल उनकी संस्कृति अपितु भाषा पर भी बदलाव आते हैं । जिससे एक मिली झुली भाषा का संचार होता है और लोग नए शब्दों का प्रयोग लोकसाहित्यिक विधाओं में भी करते हैं ।

समाज में बदलते परिवेश और आधुनिकता ने लोकसाहित्य का अस्तित्व नई दिशा में मोड़ दिया है। आज का मनुष्य परम्परा के बंधन से मुक्त होना चाहता है उसकी नई आवश्यकएं हैं वह अपनी संस्कृति को मात्र रूढ़िवादी मानता है यही मानसिकता लोक साहित्य के लुप्त होने का बड़ा कारण बन रही है। शहरीकरण बाद शिक्षा प्राप्त करने के बाद, कामकाजी पुरुष मात्र धार्मिक उद्देश्य से कथा व गीत का कार्यक्रम करता है। लोग स्थायी रूप से मात्र धर्म के लिए लोकसाहित्य को उपयोग करते हैं। जिससे पारंपरिक साहित्य का संचार आनेवाली में न के बराबर होगी। लोक साहित्य के प्रति उदासीनता का माहौल बढ़ता जा रहा है।

उपर्युक्त कारणों के संयोजन से लोकसाहित्य का अस्तित्व लुप्त होने की कगार पर आ सकता है, लेकिन यह हमेशा समृद्धि के लिए संजीव रह सकता है यदि लोग अपनी सांस्कृतिक पारंपरिकता के साथ-साथ नए माध्यमों में भी अपने साहित्य को जिवित रखने का प्रयास करें तो यह मुमकिन है।

➢ निष्कर्ष :

लोकसाहित्य यह सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत का महत्वपूर्ण हिस्सा है। आधुनिक युग में लोकसाहित्य के प्रति सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा देना आवश्यक है, और यह समसामयिक मुद्दों पर चर्चा करने का माध्यम बन सामाजिक सुधार के लिए जागरूकता फैलाने में उपयोगी साबित हो सकता है। लोकसाहित्य के प्रति लोगों को उनकी रूचि और पारंपरिक विरासत के प्रति जागरूकता लाने की आवश्यकता है। समाजिक बदलाव के अंतर्गत लोकसाहित्य के माध्यम से लोग आपसी समृद्धि और समाजिक न्याय के प्रति जागरूक हो और समाज में सुधार को बढ़ावा देने में सहायता करें।

भारत में 19500 बोलियाँ एवं भाषाएं हैं जिसका अपना अलग लोकसाहित्य विद्यमान है। कुछ लोकसाहित्य अभी भी अप्रकाशित है और उसे संरक्षित करने का दायित्व हमारा है। जिस तरह आज का व्यक्ति दुनिया की भाग-दौड़ में व्यस्त होता जा रहा है अपनी संस्कृति को कहीं पीछे छोड़ रहा है। भाषा को बचाने और लोकसाहित्य को बढ़ावा देने के लिए इन्हें लौटना होगा। इस संदर्भ में रामनरेश त्रिपाठी जी का कथन है कि- "मैं एक अच्छे अनुभवी की हैसियत से अपने उन मित्रों से जो कौवाली और टप्पे सुनने को बाहर मारे-मारे फिरते हैं , सानुरोध कहता हूँ कि लौटो, अपने अंत: पूरों को लौटो।"[21]

लोकसाहित्य संस्कृति और सामाजिक दृष्टी से आधुनिक युग में भी समाज को सशक्त करने और सुधार करने के लिए महत्वपूर्ण है। वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी क्रांति के कारण आधुनिक

युग में जैसे कि इंटरनेट, कंप्यूटर, और मोबाइल टेक्नोलॉजी, सोशल मीडिया, वायरल वीडियो और कंटेंट बनाकर भी लोकसाहित्य का प्रचार प्रसार किया जा सकता है। लोकसाहित्य आम जनमानस के जीवन को सफल व समृद्ध बनाने में भूमिका निभाता है और जनमानस के साथ साथ साहित्य को भी सुदृढ़ता प्रदान करता है। आधुनिक तकनीकी युग में साहित्यिक सामग्री ऑनलाइन प्राप्त की जा सकती है।

साक्षात्कार

नाम : जफर

उमर : 45 वर्ष

जन्म स्थल : माहरेरा

दक्षता : नृत्य एवं लोकगीत

प्रश्न 1. आपका नाम क्या है ? आप कबसे इस क्षेत्र में कार्यरत हैं ?

उत्तर : मेरा नाम जफर है। मै पेशे से भांड हूँ , मेरे परिवार की लगभग हर पीढ़ी इस क्षेत्र में सदियों से कार्यरत है मेरे घर परिवार में सब ढोल ताशे बजाकर रोजगार कमाते है।

प्रश्न 2. आपने किससे गाना सिखा और आप को ये गीत कहां से प्राप्त हुए हैं ?

उत्तर : जैसा मैंने पहले बताया के पुस्तों से गाते बजाते आ रहे है और खुद गीत की रचना भी करते है। बाकी के गीत पूर्वजों ने दिए ऐसा कह सकता हूँ आज के समय में सबको कुछ नया चाहिए इसी नये की चाह में हम फिल्मी तर्ज पर भी गीत गाते हैं जिससे लोग हमें रोजगार दे और हमारा घर चल सके।

प्रश्न 3. क्या आप जानते हैं आप जिस कला क्षेत्र से जुड़े हैं वह वास्तव में लोकसाहित्य के नाम से जाना जाता है ? आप जो बचपन से रटे हुए हैं वह लोकसाहित्य की कला है जिसे लोकगीत कहते है और जो आप जैसे कलाकारों के कारण आज भी संरक्षित है।

उत्तर- न मुझे नहीं पता ऐसा भी कुछ होता है। मैं तो अनपढ़ हूँ मुझे लगता है बचपन से जो मैं गा रहा हूँ वह साहित्य है जिसकी इतनी इज्जत है हमें तो यह बस सटे मिल मिला के तुकबंदी बिठा के बना हुआ नाच का गीत लगता है। मैं अपने बेटे को बताउंगा की हमारी कला व्यर्थ नहीं है।

प्रश्न 4. क्या आपको पता है इन गीतों का निर्माण कैसे हुआ और आप तक कैसे पहुँचे ?

उत्तर : मैंने अपने पिता एवं दादा के साथ बहुत जगह नाच किया है। ये गीत उन्होंने लोगों ने तुकबंदी और तात्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर रचे होंगे या उन्हें भी इनका स्त्रोत नहीं पता होगा। मैं बचपन से ही लड़कियों के वस्त्र पहनकर शादी ब्याह, मुंडन, भात महफिल में जाया करता था तब लोग उन्हें सम्मान से बुलाते थे। लेकिन आज हम खुद किसी के घर पुत्र जन्मावसर, बहू के आने पर सब ढोल-ताशे लेकर पहुँच जाते है और कुछ नेग मिल जाता है उससे घर चलाते हैं।

प्रश्न 5. आपके उत्तर के आधार पर आज के समय में और बीते समय यानी आपके पूर्वजों के समय में क्या अंतर है ? और आप की इस पर क्या प्रतिक्रिया है ?

उत्तर : मैं कहुंगा पुराने समय में जैसा भी भेदभाव अस्पृश्यता थी आज के समय से बेहतर थी। ऐसा इसलिए वो समय हमारी कला की कद्र करता था और हमारे बिना हर संस्कार, उत्त्सव, समारोह फिंके हो जाते थे। आज के समय में हमारी उपस्थिति अनिवार्य नहीं विकल्प मात्र हैं। मैं आज सोचता हूँ यदि शिक्षित होता तो नौकरी कर अपने परिवार का भरण-पोषण बेहतर तरीके से कर सकता। आज के मँहगाई के ज़माने में इस कला से जीवन का गुजारा नहीं हो सकता।

प्रश्न 6. मैं इस विषय पर कार्य करते समय भारी उदासीनता का समाना कर चूंकी हूँ। आप का कष्ट मैं समझ सकती हूँ। आप जिस कला के धनी हैं जिस संस्कृति की धरोहर का निर्वाह आप कर रहे हैं वह अमूल्य है आपको क्या लगता है इस कला या साहित्य का भविष्य का कैसा होगा ?

उत्तर : ये गीत धीरे-धीरे खत्म हो जायेंगे आजकल के युवा इसमें खास दिलचस्पी नहीं लेते जिसका सबसे बड़ा कारण मोबाइल फोन है जिसने आज के युवा को अपना आदि बना दिया। फिल्मी गीत लोगों को ज्यादा पसंद है और उसी पर नाच गाकर लोग विडियो बनाते है। कुछ हद तक लोग गीत याद रखे हुए हैं वो सारे लोग मेरी उमर के होंगे आजकल शहरीकरण के कारण लोग अपनी गाँव देहात की भाषा को भी बोलना अपमान समझते है।

प्रश्न 7 . यदि मैं आपके द्वारा गाये गए गीतों को शोध प्रबंध में प्रकाशित करू तो इससे आपको कोई आपत्ति है ? मैंने बहुत ही उमदा गीत यहाँ सुने मैं आपका नाम लिखकर ही गीतों का प्रकाशन कराउंगी आशा है कि आप इस बात से प्रसन्न होंगे !

उत्तर - नहीं मुझे कोई आपत्ति नहीं है। ये गीत संरक्षित हो जायेंगे इससे बड़ी क्या बात है। धन्यवाद आपने हमें इतने सम्मान से बुलाया जिसकी सराहना करता हूँ। आप अपने कार्य में सफल हो ऐसी कामना करता हूँ।

नाम : जैतुन बेगम अब्बासी

उमर : 60 वर्ष

जन्म स्थल : ग्राम : कमालपुर, कासगंज

दक्षता : नृत्य एवं लोकगीत

प्रश्न 1. आपका नाम क्या है ? आप कबसे इस क्षेत्र में कार्यरत हैं ?

उत्तर : मेरा नाम जैतुन है। मेरा विवाह कल्लू सक्के से इस गांव में हुआ था। हम जाति से भिश्ती हैं। मैं अपने माता-पिता के साथ बचपन से शादि- विवाह और विभिन्न उत्सवों पर उनके साथ जाती थी, मेरी जितनी भी उमर है जबसे बालक बोलना सीखे मैंने गाना सीखा। 55 साल तो मान ही सकते हैं।

प्रश्न 2. क्या आप जानते हैं आप जिस कला क्षेत्र से जुड़े हैं वह वास्तव में लोकसाहित्य है और आप इतने सालों से लोकगीत गा रहीं हैं ?

उत्तर : न बेटा मुझे इसकी जानकारी नहीं है ऐसा भी कुछ साहित्य है। ये गीत तो हमें आनंदित करते हैं और जो कुछ समाज में होता है वो किसी से छुपा नहीं है ये गीत उन सभी बातों को कह देते हैं और हमारे साथ-साथ और भी महिलाएँ ये गीत गाकर खुश हो जाती है। हमारे लिए यही बहुत है।

प्रश्न 3 . क्या आपको पता है इन गीतों का निर्माण कैसे हुआ और आप तक कैसे पहुँचे ?

उत्तर : नहीं पता लेकिन बचपन से गा रही हूँ तो उसके आधार पर इतना कह सकती हूँ ये गीत किसी एक के नहीं है सभी के हैं। जब हमारी माँ काम करते समय या खेतों में गाती थी तो आसपास जो भी महिलाएँ मेहनत मजदूरी करती वे साथ- साथ गाती अगर किसी पंक्ति की तुकबंदी सटीक न बैठती तो वे उसे बदल लेती और रोचक बनाने का प्रयास करती। तो ये गीत ऐसे बने है इनमें मेहनत का पसीना, ग़म के आंसु और हंसी के ठहाके आदि के मिश्रण से निर्मित ये गीत हमारी अपनी निजी पुंजी है।

प्रश्न 4 . लोकगीतों का भविष्य कैसा होगा आपकी दृष्टी से ?

उत्तर : मेरी नज़र में बेटा ये कोई ज्यादा लोगों आज पता भी नहीं होगा के ये गीत क्या है। फिल्मी धुन सभी को याद रहती है। मैंने गाँव में जब फिल्मी गीतों का चलन देखा तो एहसास हुआ के हम लोग और हमारी कला अब खत्म हो रही है । कोई भी अपने बाल-बच्चों को हमारी तरह गाना नहीं सिखाना चाहता फिल्मी गीत तो आज कल सब पैदा होते ही मोबाइल पर देख रहे है । गीतों का भविष्य हमारे खत्म होते ही खत्म हो जायेगा।

प्रश्न 5. प्राचीन समय में और आधुनिक युग में लोकसाहित्य में क्या अंतर आया है ? और आपकी स्थिति पहले और आज में कैसी है?

उत्तर : पहले का जमाने में ऊँच-नीच छुआ-छुत ज्यादा था अब इतना नहीं है। सरकार के नियम कानून के कारण कहो या आधुनिक युग का प्रभाव। मैं बचपन में गीत गाती थी लोग मुझे ईनाम देते थे सम्मान भी देते थे। हमे आदर के साथ कार्यक्रम में महिनों पहले से आमंत्रित किया जाता था। लेकिन आज शादी-ब्याह में हमें कूड़ा बरतन साफ करने के लिए बुलाया जाता है। रोजगार के लिए हमें ये सब करना पड़ता है।

प्रश्न 6 : मैं आपके द्वारा गाये गए गीतों को शोध प्रबंध में प्रकाशित करूँ तो इससे आपको कोई आपत्ति है ? मैंने बहुत ही उमदा गीत यहाँ सुने मैं आपका नाम लिखकर ही गीतों का प्रकाशन कराउंगी आशा है कि आप इस बात से प्रसन्न होंगी !

उत्तर : ये गीत मेरे है ऐसा मैं नहीं कहुंगी ये सबके है और इनगीतों को तुम भी अपना कह सकती हो। आजकल किसी को गीत की पंक्तियाँ याद नहीं आती है। आज बहुत अरसे बाद मैंने इतने गीत गाए हैं मन हल्का हो गया। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है के तुम खुश रहो और अपने कार्य में सिद्धि प्राप्त करो।

नाम : मेहरुन्निसा अब्बासी

उमर : 40 वर्ष

जन्म स्थल एवं ग्राम : कमालपुर, कासगंज

निवास स्थल : गनेशपुर

दक्षता : नृत्य एवं लोकगीत

प्रश्न 1. आपका नाम क्या है ? आप कबसे इस क्षेत्र में कार्यरत हैं ?

उत्तर : मेरा नाम मेहरुन्निसा अब्बासी है। मैं जैतून अब्बासी की बेटी हूँ। मैं बचपन अपनी माँ के साथ समारोह में जाती थी और उन्हीं के साथ गाती थी। मुझे गाने की कला माँ से मिली है। मैं शादी के बाद कम गाती हूँ। क्योंकि वक़्त नहीं मिलता और आज का समय बदल चुका है।

प्रश्न 2. क्या आप जानते हैं आप जिस कला क्षेत्र से जुड़े हैं वह वास्तव में लोकसाहित्य है और आप इतने सालों से लोकगीत गा रहीं हैं ?

उत्तर : नहीं मैं इस बात से परिचित नहीं हूँ। लेकिन इतना जानती हूँ के मंडलीवाले इसे ग्राम गीत कहते हैं। ये गीत हमें खुशी देते है मन प्रफुल्लित हो जाता है जब भी इन गीतों की धुन भी कानों में पड़ती है।

प्रश्न 3 . क्या आपको पता है इन गीतों का निर्माण कैसे हुआ और आप तक कैसे पहुँचे ?

उत्तर : मैंने ये गीत अपनी माँ से सीखे हैं। और इसके निर्माण और स्त्रोत की जानकारी मुझे नहीं है।

प्रश्न 5. प्राचीन समय में और आधुनिक युग के लोकसाहित्य में क्या अंतर आया है ? और आपकी स्थिति पहले और आज में कैसी है?

उत्तर : प्राचीन समय में और आधुनिक युग के लोकसाहित्य में बहुत अंतर है। पहले की महिलाएं ढोल- ताशे न मिलने पर भी थाली, बेलन और तसले बजाकर गीत के संगीत का निर्माण करती थी। उस वक़्त में बहुत रौनक थी आज डी जे का जमाना है फिल्मी गीत और अन्य भाषाओं के गीत बजाकर समारोह एवं उत्सव मनाए जाते हैं। आज हमारी स्थिति अलग है मेरे पिता कल्लू (सक्के) के नाम से गाँव में प्रख्यात है पहले मेरे पिता मशक में पानी भर शादी बारातों में लोगो को पानी पिलाते थे मेरे भाई शादी में भोजन खाने-खिलाने से लेकर बरतन साफ करने तक सारा काम करते थे। आज वो शहरों की ओर पलायन कर गये हैं और यहाँ तो अब मंडप वाले सारा काम करते हैं और दूगना दाम वसुलते है। कुल मिलाकर कहुं तो आज हम रोजगार और आर्थिक तंगी से जूझ रहे है।

नाम : मैसर खान (गायक/ कव्वाल)

उमर : 56 वर्ष

जन्म स्थल एवं ग्राम : कमालपुर, कासगंज

दक्षता : नृत्य एवं लोकगीत

प्रश्न 1. आपका नाम क्या है ? आप कबसे इस क्षेत्र में कार्यरत हैं ?

उत्तर : मेरा नाम मैसर खान है। मैं बचपन से समारोह में जाता था। मुझे गाने की कला मेरे पूर्वजों से मिली है। मैं 40 साल से गा रहा हूँ। मैं ग्रामगीत, कव्वाली, फिल्मी गीत, और भजन भी गाता हूँ।

प्रश्न 2. क्या आप जानते हैं आप जिस कला क्षेत्र से जुड़े हैं वह वास्तव में लोकसाहित्य है और आप इतने सालों से लोकगीत गा रहीं हैं ?

उत्तर : हाँ मैं जानता हूँ। मैं अलग-अलग मंडली में जाता रहा हूँ। और गायकों के साथ भेंट करने के बाद ये जानकारी मिली। सभी गायक अपने-अपने क्षेत्र के गीत गाते थे। मैं भी अपने क्षेत्र के गीत गाता था। मैं लोकगीत गाता भी हूँ और लोकगीतों को आज के समय के हिसाब बदल भी देता हूँ।

प्रश्न 3 . क्या आपको पता है इन गीतों का निर्माण कैसे हुआ और आप तक कैसे पहुँचे ?

उत्तर : मैंने ये गीत अपने पूर्वजों से सीखे हैं। और इसके निर्माण और स्त्रोत की जानकारी मुझे नहीं है।

प्रश्न 5. प्राचीन समय में और आधुनिक युग के लोकसाहित्य में क्या अंतर आया है ? और आपकी स्थिति पहले और आज में कैसी है?

उत्तर : बदलाव प्रकृति का नियम है। प्राचीन समय और आधुनिक समय में बहुत अंतर है। प्राचीन मानव कला का कदरदान था। हमें बहुत इनाम और आर्थिक रूप से हम सुखी थे लेकिन आज हम गाना बाजाना छोड़कर मेहनत मजदूरी कर जीवनयापन कर रहे हैं

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. रामचन्द्र तिवारी; हिन्दी का गद्य- साहित्य; पृ. 60
2. डॉ. शेफाली चतुर्वेदी; ब्रज लोक साहित्य : नव चिंतन ; पृ. 258
3. डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती ; लोकसाहित्य के प्रतिमान; पृ. 309-310
4. डॉ. सत्येंद्र; ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन ; पृ. 5
5. डॉ. सत्येंद्र; लोकवार्ता और लोकगीत ; ब्रज लोक संस्कृति; ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा
6. डॉ. सत्येंद्र; लोकसाहित्य विज्ञान; पृ. 4-5
7. सं. राहुल सांकृत्यायन; हिंदी साहित्य का बृहत इतिहास (षोडश भाग) ; पृ. 15-16
8. डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती ; लोकसाहित्य के प्रतिमान; पृ. 80
9. वही; पृ. 250
10. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय; भोजपुरी लोकगीत ; पृ. 150
11. डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती ; लोकसाहित्य के प्रतिमान; भूमिक से
12. वही; पृ. 305
13. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय; लोकसाहित्य की भूमिका; पृ. 309
14. डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती ; लोकसाहित्य के प्रतिमान; पृ. 221
15. वही; पृ. 222
16. वही; पृ. 222
17. वही; पृ. 225
18. वही; पृ. 225

19. वही; पृ. 227

20. डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती ; लोकसाहित्य के प्रतिमान; पृ. 309

21. पं. रामनरेश त्रिपाठी; कविता कौमुदी (5वाँ भाग) पृ. 64